मोहन राकेश के नाटकों का विचारबोध

डॉ. महेश पंड्या

१. प्रस्तावना

'काव्येषुनाटके रम्यम्' विद्वानों की उक्ति से नाट्यरचना का महत्व स्वत सिद्ध है। भारतवर्ष में ही नहीं, संसार के अन्यान्य देशों में भी नाटक गौरवपूर्ण स्थान ग्रहण करते रहे है । मानव का व्यक्तित्व शारीरिक और मानसिक संगठनों पर आधारित हैं। इसके क्रियाकलाप, कार्यक्षमता, सामाजिक व्यवहार एवं रूढ़ियों द्वारा उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है। साहित्य का संबंध मानव व्यक्तित्व के सभी पक्षों से होता है। इसमें बौद्धिक, भावात्मकता का पक्ष रहता है। साहित्य साहित्यकार की आत्मगत प्रवृतियों की अभिव्यक्ति का सबल साधन है। यह अपने नाटकीय वस्तुविलास एवं पात्र निरूपण में कल्पना से भिन्न भिन्न भाव स्थितियों को उत्पन्न करता है जिसका संबंध मानव मनीषा से होता है। नाटक साहित्य की रमणीयतम विधा है। विश्व के सभी देशों में विद्वत समाज में ही नहीं जनता साधारण में भी लोकानुरंजन के प्रमुख साधन के रूप में वह विधा लोकप्रिय रही है। मानव का व्यक्तित्व शारीरिक और मानसिक संगठनों पर आधारित है। साहित्य का सम्बन्ध मानव व्यक्तित्व के सभी पक्षों से होता है। साहित्य साहित्यकार की आत्मनत प्रवृतियों की अभिव्यक्ति का सबल साधन है। वह अपने नाटकीय वस्तु विकास एवं पात्र निरूपण में कल्पना से भिन्न भिन्न भाव स्थितियाँ उत्पन्न करता है, जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मानव मनीषा से होता है। इसी से साहित्य में विचारबोध की संज्ञादी है। विचारबोध एक युग्म शब्द है जो विचार और बोध के संयोग से बना है। जिसका अर्थ है विचारों की वास्तविक स्थिति।

२. विचारबोध

विचारबोध एक युग्म शब्द है, जिसका अर्थ है विचारों को वास्तविक स्थिति। 'चर' धातु में 'वि' उपसर्ग तथा 'धत्र' प्रत्यय के संयोग से विचार शब्द निष्पन्न हुआ है। जिसका शब्दार्थ चिन्तन, विमर्श, तत्वार्थ, चिन्तन होता है। वास्तव में जो कुछ मन में सोचा गया अथवा सोचकर व्यक्त किया जाये, वही विचार है। अर्थात् 'विचार' संस्कृत भाषा का पुलिंग शब्द है। विचार शब्द के कोशगत अर्थ अनेक है "मन ही मन तर्क-वितर्क करते हुए सोचना, समझना, आगा पीछा निश्चित करना जैसे सब बातों पर विचार कर लेना।"[1] लालाजी शुक्ल के मतानुसार "विचार मन की यह प्रक्रिया है जिसमें हम पुराने अनुभवों को वर्तमान समस्याओं को हल करने के प्रयोग में लाते है। इस प्रकार समस्या लक्ष्यप्राप्ति या उद्देश्यपूर्ति हेतु किया गया चिन्तन ही वस्तुतः विचार है। अतः विचार हेतु पूर्ण किया गया चिन्तन ही वस्तुत विचार है। अतः विचार हेतु पूर्ण उपलब्ध अनुभव एवं ज्ञान आवश्यक है।"[2] डॉ. नगेन्द्र के मतानुसार "इन्द्रिय बोध अथवा भावना से भिन्न भाव पर मानसिक केन्द्रियकरण की परिणति ही विचार है।"[3] इस प्रकार विचार के अनेक अर्थ है।

२.१ बोध का अर्थ

बोध शब्द संस्कृत की 'बुध्' धातु से बना है जिसका अर्थ है जानना। अंग्रेजी में बोध के पर्याय है अवेरनेस (Awareness) कोन्शसेनस् (Conciousness) तथा सेसिबिलिटी (Sensibility) बोध शब्द से तात्पर्य किसी वस्तु विषय, धारा, व्यवहार का ज्ञान माना जाता है। 'बोध' शब्द अत्यन्त व्यापक शब्द देता है। इसे चेतना का समानार्थक कह सकते है। 'बोध' अथवा 'चेतना' की प्रमुख विशेषता है निरन्तर परिवर्तनशीलता।

'बोध' के कोशगत अर्थ भी अनेक है जैसे ज्ञान, जानकारी, तसल्ली, धीरज, डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी ने अपने 'विश्व हिन्दी कोश' के भाग चार में अर्थ दिया है कि बोध स्वयं को और अपने आसपास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा अपने हिन्दी साहित्य कोश में लिखते हैं, बोध का प्रभाव हमारे अनुभव वैचित्र्य से प्रमाणित होता है और बोध की अविच्छिन्न एकता हमारे व्यक्तिगत तादात्म्य के अनुभव से मानी जाती है। 'बोध' शब्द इन्द्रियानुभूति के माध्यम से किसी वस्तु की स्थिति का परिज्ञान कराता है जिसमें समय-सापेक्षता अधिक रहती है। "बोधरूपी शक्ति मानव चेतना की देन है। निरन्तर परिवर्तनशीलता अथवा प्रवाहबोध का मूलाधार है। मनोविज्ञान के अनुसार बोध मानव में उपस्थित वह महत्वपूर्ण तत्व है जिसके कारण ही उसे विविध प्रकार की अनुभूतियों प्राप्त होती है।"[4] मानवीय बोध में ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक चेतना का समावेश होता है। यह मनुष्य की विशिष्टता है जो उसे व्यक्तिगत तथा वातावरण के विषय में ज्ञान कराती है। इस प्रकार के ज्ञान को विचार या बुद्धि कहा जाता है। मनुष्य की सारी क्रियाओं और गतिशील प्रवृतियों का मूल कारण बोध ही है। बोध का विकास सामाजिक वातावरण के संपर्क से होता है। वातावरण के प्रभाव से मनुष्य नैतिकता, औचित्य और व्यवहारकुशलता प्राप्त करता है। यह बोध का विकास कहा जाता है। "मनुष्य की सारी क्रियाओं और गतिशील प्रवृतियों का मूल कारण बोध ही है। बोध का विकास सामाजिक वातावरण के सम्पर्क से होता है। वातावरण के प्रभाव से मनुष्य नैतिकता, औचित्य और व्यवहारकुशलता प्राप्त करता है। यह बोध का विकास कहा जाता है।"[5] प्रत्येक व्यक्ति के अपने विचार होते है, जो समय के साथ बदलते एवं परिवर्तित होते रहते है। और विचार के परिवर्तन के साथ उसके बोध भी बदलते रहते है।

२.२ विचारबोध का अर्थ

नाटककार परंपरा को तोडता है और नवीन विचारधारा को महत्त्व देता है। "प्रत्येक देश की कुछ अपनी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियाँ होती है जिनसे कोई बोध बनकर जनता को प्रभावित करता है। कोई वर्ग समाज या देश बोध को उधार नहीं लिया करता। दो विरोधी दिशाओं में जब कुछ विचारधाराएँ बहते बहते किसी विशेष परिस्थिति में एक-दूसरे से टकराती है। तब तक नयी दृष्टि उत्पन्न होती है। कभी उसे मूल्य मानकर उसके रूप को संकुचित स्वीकार किया जाता है, तो कभी युग सापेक्ष्य धर्म मानकर उसकी सार्थकता को फैला दिया जाता है।"[6] विचारबोध अनेक प्रकार के होते है –
सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आधुनिक, मूल्य, नैतिक, आदर्श, यथार्थ, अस्तित्व, संत्रास, विसंगति, अध्यात्म, ईश्वरीय आदि। अंत में कह सकते है कि विचार की ही कोई सीमा नहीं है तो बोध भी अनेकानेक होगे ही।

२.३ चयनित नाटकों में विचारबोध

विचारबोध मानव की मूल समस्याओं के जितना निकट होगा उतना ही अधिक महान होगा और जितना अधिक प्रच्छन्न एवं निगूढ होगा उतना ही प्रभावशाली एवं स्थायी होगा। नाटक में विचार का समग्र प्रभाव नाटक एवं दर्शक के दिलदिमाग को स्पर्श करता है। नाटक का विचारबोध जीवन की व्याख्या आलोचना है। नाटक में जीवन की व्याख्या समझने का प्रयत्न किया जाता है। नाटककार स्वयं कभी हमारे सामने नहीं आता किन्तु वह अपने पात्रों के माध्यम से जो बातें करता है इन सबके लिए वह उतरदायी है। नाटककार अपने युग का आदर्श रखता है। अतः इनसे तत्कालीन समाज के उत्कर्ष या अपकर्ष उत्थान या पतन का ज्ञान हमें हो जाता है। नाटक का सबसे बड़ा विचारबोध नैतिक उन्नति और सामाजिक कल्याण की भावना को जन्म देता है। प्रत्येक नाटक का अपना अपना विचारबोध होता है। नाटककार वर्तमान समाज की किसी समस्या को अपने पात्रों, दृश्यों एवं संवादों के माध्यम से उजागर करता है। और वह चित्र दिखाकर समाधान स्थापित करता है अथवा समाज के सामने प्रश्नार्थ रखता है।

चयनित नाटकों के संदर्भ में देखें तो प्रस्तुत चारों नाटकों में वर्तमान समस्याओं का उद्घाटन किया है। इन चारों नाटकों में निहित विचारबोध की अब हम विस्तृत चर्चा करेंगे।

२.४ स्त्री-पुरुष सम्बन्ध

स्त्री-पुरुष सम्बन्ध हमारे समाज की सबसे बड़ी समस्या है। राकेश ने अपने नाटकों में स्त्री पुरुष सम्बन्ध की समस्या को उठाया है। परंपरागत जीवन एवं परिवेश से मुक्ति के कारण पुरुष के अधिकार क्षेत्र नारी की पारिवारिक भूमिका यौन सम्बन्ध मनःस्थिति में ऐसे परिवर्तन आये जिन्होंने प्राचीन मान्यताओं को बदल दिया। विवाह प्रेम यौन सम्बन्ध और परिवार के संदर्भ में नारी का शोषण अत्यधिक होता रहा है।

'आषाढ़ का एक दिन' नाटक में कालिदास और मल्लिका सम्बन्ध नाटक को केन्द्रीय कथा है। मल्लिका की माता अम्बिका को वह सम्बन्ध स्वीकार नहीं, क्योंकि उसकी दृष्टि से कालिदास एक आत्मसीमित व्यक्ति है। संसार में अपने सीवा उसे किसी से मोह नहीं हैं। विलोम भी मल्लिका को अपनाना चाहता है। लेकिन मल्लिका उसे ध्रुणा करती है। इस प्रकार इस नाटक में विलोम और मल्लिका सम्बन्ध भी बताया गया है। जो हमारे समाज में आज अनेक प्रकार के अभावों से विवश होकर दूसरों से शादी करनी पड़ती है। कालिदास मल्लिका को छोड़कर उज्जैन चला जाता है। मल्लिका उसके अभाव में ही जीवन व्यतीत करती है। कालिदास मल्लिका को अपरिचित होकर मिलता है। वह कहता है "पहचानती नहीं हो और न पहचानना ही स्वाभाविक है। क्योंकि मैं वह व्यक्ति नहीं हूँ जिसे तुम पहले पहचानती रही है।"[7] इस तरह अम्बिका का अंतर्द्वन्द्व मल्लिका और कालिदास के सम्बन्धों का है।

'लहरों के राजहंस' नाटक में भी नन्द और सुन्दरी का सम्बन्ध उठाया गया है। सुन्दरी एक ऐसी स्वाभिमानी और गर्वमयी नारी है जो अपने सौन्दर्य आकर्षण के बन्धन में अपने पति नन्द को बाधि रखना चाहती है। इस नाटक में स्त्री पुरुष सम्बन्धों के तीन रूप है। अलका-श्यामांग, सुन्दरी-नन्द और यशोधरा-गौतम। अलका और श्यामांगा का प्रेम स्त्री और पुरुष के बीच भावना के दूसरे स्तर को प्रस्तुत करता है। सुन्दरी पुरुष और उसकी चेतना को अपने तक बाधि रखना चाहती है। पुरुष बंधना चाहकर भी उसके ऊपर उठना चाहता है। नारी को एक बाधा के रूप में स्वीकार करना वर्तमान युग में संभव नहीं। वह कहती है "नारी का आकर्षण पुरुष को पुरुष बनाता है। तो उसका आकर्षण उसे गौतम बुद्ध बना देता है।"[8] यह नाटक अपने वर्तमान स्वरूप में विरोधी स्थितियाँ, विचारों तथा स्त्री पुरुष सम्बन्धों को तलाश की प्रक्रिया में इसके आधुनिक व्यक्ति को प्रस्तुत करता है। यही स्थिति हमारे समाज में देखने को मिलती है।

'आधे अधूरे' नाटक में वर्तमान जीवन के यथार्थ पात्रों परिस्थितियाँ और मनःस्थितियाँ को प्रस्तुत किया गया है। डॉ. लक्ष्मीराय के मतानुसार "यह एक स्तर पर स्त्री-पुरुष के बीच के लगाव और तनाव का दस्तावेज है।"[9] सावित्री अपने पति महेन्द्रनाथ एवं बच्चों से तंग आकर अपनी शेष जिंदगी किसी अन्य पुरुष के साथ व्यतीत करने की तलाश में भटकती है। इस तलाश में वह जुनेजा, जगमोहन, सिंघानिया से सम्बन्ध रखती है। किन्तु किसी से भी संतोष प्राप्त नहीं कर सकती। वह कहती है "सबके सब एक से बिल्कुल एक से है आप लोग। अलग अलग मुखौटे पर चेहरा सबका एक ही"[10] मनोज सावित्री की युवा बेटी को भी भगाकर ले जाता है।

'पैर तले जमीन' नाटक में भी मोहन राकेश ने जहाँ मृत्यु के सामने व्यक्ति के पलायन की समस्या को सामने रखा है, वहाँ उन्होंने स्त्री-पुरुष सम्बन्धों की भी प्रस्तुत किया है। पंडित और झुनझुनवाला रोग ताश की पाजियाँ लगाते है। किन्तु पंडित झुनझुनवाले के शिपले में फँसा हुआ है। यहाँ तक कि उसकी पत्नी पर भी

झुनझुनवाले का ही अधिकार है। यहाँ तक कि उसकी पत्नी पर भी झुनझुनवाले का ही अधिकार है। दूसरी और अयूब को पत्नी सलमा आंतरिक रूप से ऐसी हो जाती है कि उसमें कहीं न प्यार टूटता है और न नफरत। वह एक डॉक्टर से प्रेम करती है। उसका पति अयूब भी रीता दीवान और नीरा के बलात्कार करना चाहता है। इस प्रकार राकेश ने स्त्री पुरुष सम्बन्ध को अधिक दिखाया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. राजपाल हिन्दी शब्दकोश, डॉ. हरदेव बाहरी, पृ.743
2. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक विचारतत्त्व, डॉ. अवधेश चन्द्रगुप्त, पृ.19
3. हिन्दी कहानी में युगबोध, डॉ. मंजुलता सिंह, पृ.2
4. आषाढ़ का एक दिन, मोहन राकेश, पृ.103
5. लहरों के राजहंस, मोहन राकेश, पृ.52
6. आधुनिक हिन्दी नाटक - चरित्र सृष्टि के आयाम, डॉ.लक्ष्मीराय, पृ.433
7. आधुनिक हिन्दी नाटक - चरित्र सृष्टि के आयाम, डॉ.लक्ष्मीराय, पृ.433
8. आधे अधूरे, मोहन राकेश, पृ.62
9. मोहन राकेश के नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, डॉ. अब्दुल सुभान, पृ.143
10. मोहन राकेश के नाटक, डॉ. द्विजराज यादव, पृ.122
11. लहरों के राजहंस, मोहन राकेश, पृ.131